युवा-साधक

आनन्दमय जन्मदिवस के उपलक्ष्य में प्रस्तुत
श्रीगुरुमाई के साथ घटित कुछ प्रसंग

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : १

शकुन्तला सीगल

वर्ष २०११ का जून माह था, श्रीगुरुमाई के जन्मदिन का माह। २४ जून के उस सप्ताहान्त पर मुझे अपने परिवार के साथ श्री मुक्तानन्द आश्रम आने का आमन्त्रण मिला था, अतः हम सभी बड़े ख़ुश थे, ख़ासकर मेरी बेटियाँ, प्रेमा और सरीखा। २४ जून का दिन आया—वह दिन जिसकी प्रतीक्षा सभी बड़ी उत्सुकता से कर रहे थे। मेरी छोटी बेटी प्रेमा, जो उस समय तीन वर्ष की थी, उस दिन सुबह जब जगी तो बड़ी ही ख़ुश थी। उठते ही वह अत्यन्त दृढ़ता से बोली, “गुरुमाई जी आज अपने जन्मदिन समारोह में आने वाली हैं और वे अपनी गोल वाली टोपी पहनेंगी!”

मैं आपको बताना चाहती हूँ कि प्रेमा जब बहुत छोटी थी तभी वह आश्रम गई थी, उसके बाद कभी नहीं गई। जहाँ तक हम जानते थे, उसे यह याद भी न रहा होगा कि उसके पहले वह व्यक्तिगत रूप में गुरुमाई जी के सान्निध्य में कभी रही होगी। अतः उसे कैसे पता चलता कि गुरुमाई जी आने वाली हैं या नहीं, या वे क्या पहनने वाली हैं?

उसी दिन सुबह, कुछ देर बाद, श्रीनिलय हॉल में एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन के स्टाफ़ तथा विज़िटिंग सेवाकर्ताओं के लिए एक वर्कशॉप आयोजित की गई थी जो कि जन्मदिन महोत्सव का ही एक भाग थी। मेरे पति, एसा, उस कार्यक्रम के सूत्रधार की सेवा अर्पित कर रहे थे। मैं वर्कशॉप के दौरान प्रेमा, उसकी बहन सरीखा और कुछ अन्य बच्चों के साथ थी जो बच्चों के कक्ष में खेल रहे थे।

वर्कशॉप के समापन के समय गुरुमाई जी श्रीनिलय हॉल में पधारीं और उन्होंने अपना आसन ग्रहण किया। और सच में, वे जो टोपी पहने हुए थीं उसकी किनार गोल थी [जिसे कोई तीन साल का बच्चा “गोल टोपी” ही कहेगा]! मेरे पति ने गुरुमाई जी को जन्मदिन की ढेर सारी शुभकामनाएँ दीं; तत्पश्चात्, उनसे रहा न गया और उन्होंने गुरुमाई जी से कहा, “गुरुमाई जी मैं आपको बताना चाहता हूँ कि मेरी तीन साल की बेटी, प्रेमा जब आज सुबह जगी तो पहली बात जो उसने मुझसे कही, वह

थी, “गुरुमाई जी आज अपने जन्मदिन समारोह में आने वाली हैं और वे अपनी गोल वाली टोपी पहनेंगी!”

गुरुमाई जी आनन्द से मुस्कराईं। फिर उन्होंने बताया कि उन्हें लग रहा था कि उनके वह टोपी पहनने के पीछे ज़रूर कोई वजह होगी! उन्होंने कहा कि उस दिन टोपी पहनने का उनका कोई इरादा नहीं था। पर जब वे वर्कशॉप आने के लिए निकलीं, उनकी नज़र उस टोपी पर पड़ी और उन्होंने उसे उठा लिया। उन्होंने कहा, “हाँ, मैंने वह उसके लिए ही पहनी!”

उसी समय मैं अपनी बेटियों के साथ श्रीनिलय हॉल में पीछे की ओर से प्रवेश कर रही थी। वर्कशॉप का समापन होने पर, ‘सद्गुरुनाथ महाराज की जय!’ का उल्लासभरा उद्घोष हुआ जिसके बाद गुरुमाई जी अपने आसन से उठीं और हॉल के पिछले भाग की ओर बढ़ते हुए, हमारी तरफ़ आने लगीं। बड़ी-सी मुस्कान के साथ वे सीधे हमारे पास आईं, और मेरी तीन वर्षीय बेटी की तरफ़ देखते हुए मुझे पूछा, “प्रेमा?” मैंने जवाब दिया, “जी हाँ, गुरुमाई जी!”

फिर गुरुमाई जी अपने घुटनों के बल बैठ गईं ताकि वे प्रेमा से बात कर सकें। उन्होंने कहा, “हाँ, प्रेमा! मैंने इसे तुम्हारे लिए पहना है! सच है . . .मैंने यह टोपी तुम्हारे लिए ही पहनी!” यह सुनकर प्रेमा ने स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया।

इस अनमोल संवाद को इतने नज़दीक से देखकर मैं ख़ुशी से भर गई। मेरी श्रीगुरु मेरी बेटी पर इतने प्रेम की वर्षा कर रही हैं, यह देखकर मेरा दिल भर आया। मुझे ऐसा लगा कि कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण घटित हो रहा है। गुरुमाई जी सीधे प्रेमा से बात कर रही थीं और मुझे लग रहा था कि वे दोनों एक-दूसरे को एक ऐसे स्तर पर समझ रही हैं जो मेरे लिए अत्यन्त गूढ़ था। फिर, गुरुमाई जी ने बड़े प्यार-से प्रेमा को गले लगाया और उसे चूमा, और फिर वे वहाँ से चली गईं।

यह अनुभव मुझे अक्सर याद आता है जिसमें एक गूढ़ एकलयता है। यह एकलयता प्रेमा के लिए, जो उस समय आश्रम में सबसे छोटी थी, पूर्णतः स्वाभाविक थी। गुरुमाई जी प्रेमा के साथ कितने आदर से बात कर रही थीं; वे उसके साथ ऐसे रूप में संवाद कर रही थीं जो ऐसा लग रहा था मानो केवल वे दोनों ही उसे वास्तव में समझ रही हों—आत्मा का आत्मा से संवाद।

इतने वर्षों से यह अनुभव मेरी स्मृति में बना रहा है और अत्यन्त सशक्त रूप से यह मुझे याद दिलाता है कि श्रीगुरु सबकी आत्मा के साथ एकरूप हैं, और वे सतत उनके सम्पर्क में रहती हैं, उनके साथ संवाद करती हैं जो उनसे प्रेम करते हैं; और छोटे बच्चों की ही तरह यदि हमारे हृदय में खुलापन हो व हमारा मन निर्मल हो तो हम भी उस अन्तर-वार्तालाप की अनुभूति कर सकते हैं।

अब प्रेमा दस वर्ष की है; आज भी वह उस पल को याद करती है, जो उसके लिए बहुत ख़ास होने के साथ-साथ बड़ा ही सहज-स्वाभाविक भी है। हाल ही में मैंने प्रेमा से पूछा कि वह अवसर उसे कैसे याद है तो उसने कहा, "उस समय मैं कोई होशियार नहीं बन रही थी। मुझे बस पता था।" और फिर उसने मुस्कराकर कहा, "गुरुमाई जी सब जानती हैं।"

***

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : २

वाणी अग्रवाल

१९८० के दशक के आरम्भिक काल में, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में एक युवा गुरुकुल विद्यार्थी के रूप में रह रही थी। मुझे आश्रम का हर भाग पसन्द था—भगवान नित्यानन्द का मन्दिर, समाधि मन्दिर, गुरुचौक।

वहाँ फूलों व पेड़ों से भरे सुन्दर बगीचे मुझे बहुत ही प्यारे लगते थे। आप जानते ही होंगे कि आश्रम के बगीचों में कितने ही प्रकार के फलों के पेड़ हैं—जैसे कि आम, जामुन, कटहल और अमरूद।

अन्नपूर्णा हॉल के पास एक अमरूद का पेड़ था जो ठण्ड के मौसम में, सदा ही बड़े स्वादिष्ट अमरूदों से लदा रहता।

हम बच्चों को अमरूद बहुऽऽऽत ही पसन्द थे! हर रोज़ अन्नपूर्णा जाते समय जब हम इस पेड़ के पास से गुज़रते तो शाखाओं पर लटकते सुनहरे अमरूदों को बड़ी हसरतभरी नज़रों से देखते।

और हम रोज़ वहाँ अध-खाए अमरूदों को ज़मीन पर पड़ा हुआ देखते थे। गिलहरियाँ और तोते उनकी दावत उड़ाते और बचे-खुचे वहाँ गिरा देते थे।

हमारा भी अमरूद खाने का बड़ा मन होता था। हम बच्चों ने मिलकर इस बारे में चर्चा की। और हालाँकि हम सब अच्छी तरह जानते थे कि आश्रम के पेड़ों से फल तोड़ने नहीं चाहिए, फिर भी अपनी असीम बुद्धिमानी का उपयोग करके हमने तय किया कि अगर पशु-पक्षी आश्रम के अमरूद खा सकते हैं, तो हम बच्चे भी तो खा सकते हैं!

तो हमने एक योजना बनाई।

एक दिन, दोपहर को भोजन के बाद जब सब लोग, या तो अपने-अपने कमरों में या सेवा में लौट चुके थे, तब चोरों की हमारी छोटी-सी टोली उस अमरूद के पेड़ के पास इकट्ठा हुई। हमने पहले इधर-उधर देखा कि कहीं आस-पास कोई है तो नहीं। हममें से एक लड़की को पेड़ पर चढ़ना आता था, तो उसने कहा कि वह ऊपर चढ़ेगी। पेड़ बहुत ऊँचा तो था नहीं, इसलिए हम सब मान गए।

हम सब पेड़ के आस-पास इकट्ठे हो गए। हमारी सहेली ने पेड़ पर चढ़कर पके-पके अमरूद तोड़ना व नीचे फेंकना शुरू किया और हम उन्हें बटोरने लगे।

हमने पाँच या छः अमरूद ही बटोरे थे कि अचानक हमें एक आवाज़ सुनाई दी . . . एक गहरी, गूँजती हुई आवाज़ . . . ऐसी आवाज़ जिसे हम बहुत अच्छी तरह से पहचानते थे . . . जो कह रही थी, “यहाँ क्या चल रहा है?”

पल भर के लिए तो हमारे हाथ-पाँव ठण्डे पड़ गए। फिर गुरुमाई जी की ओर देखने के लिए मुड़े बिना ही, पेड़ की डाली पर बैठी हुई अपनी सहेली को वहीं अकेला छोड़कर हम वहाँ से भाग लिए। जैसे ही पेड़ पर बैठी हमारी सहेली ने गुरुमाई जी को देखा, वह कूदी और गुरुमाई जी के चरणों के पास आ गिरी। फिर वह हड़बड़ाते हुए उठी और मुड़कर देखे बिना ही वहाँ से भाग गई।

उस पूरी दोपहर हम सब एक-दूसरे से आँख चुराते रहे; हर कोई सोच रही थी, “हे भगवान, हमने यह क्या किया? हमने न केवल आश्रम के फल ही तोड़े बल्कि गुरुमाई जी के सामने से भाग भी गए! अब क्या होगा?”

किन्तु, उस शाम, मेरे आश्चर्य और ख़ुशी का ठिकाना न रहा जब मुझे श्रीगुरुमाई से प्रसाद मिला—अमरूदों से भरी टोकरी!

बाद में मुझे पता चला कि जो भी लड़कियाँ इस शरारत में शामिल थीं, हर एक को वही प्रसाद मिला था।

और उस प्रसाद के साथ, हममें से हर एक को गुरुमाई जी से एक सन्देश मिला था।

गुरुमाई जी का हमारे लिए सन्देश था, “यदि तुम्हें कुछ चाहिए तो माँगकर देखो। हो सकता है वह तुम्हें मिल जाए या हो सकता है न भी मिले। पर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस तरह तुम वह करोगे जो सही है।”

मुझे अत्यधिक प्रेम महसूस हुआ, गुरुमाई जी के इस प्रसाद में और उनके इस संकल्प में कि हम अपनी ग़लती से सीखें।

गुरुमाई जी की यह सिखावनी मेरी घनिष्ठ सहचरी रही है; इसने मुझे अपने जीवन में उचित निर्णय लेने के लिए बार-बार मार्गदर्शन दिया है।

तहे दिल से शुक्रिया गुरुमाई जी।

***

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : ३

लीलावती स्टुअर्ट

सितम्बर १९९९ में, श्रीगुरुमाई 'टीचिंग विज़िट्स्' की यात्रा के दौरान गुरुदेव सिद्धपीठ में थीं। मैं वहाँ सेवा अर्पित करने के लिए आई थी। मेरे साथ मेरा छः माह का बेटा, जस्टिन भी था। मैं पहली बार माँ बनी थी और सीख ही रही थी कि इस सुन्दर व चंचल बच्चे की ज़रूरतों को कैसे पूरा करना चाहिए।

हमारे आश्रम-वास के दौरान, अक्सर श्रीगुरुमाई गुरुचौक में बैठकर दर्शन देतीं। मैं भी दर्शन के समय अपने बेटे को लेकर वहाँ बैठती। और जब भी वह कुलबुलाने या रोने लगता तो मैं ताली बजाती, उसके लिए गाती और उसे हँसाने की कोशिश करती। उसे ख़ुश रखने के लिए मैं भारी प्रयत्न करती।

एक दिन, जब जस्टिन सो रहा था तब श्रीगुरुमाई हमारे निवासस्थान में हमसे मिलने आईं। उन्होंने मुझे बताया कि उन्होंने देखा है कि जब भी मेरा बेटा रोता है तो हर बार मैं उसे शान्त करने के लिए उसे रिझाना शुरू कर देती हूँ। फिर गुरुमाई जी ने बहुत ही सुन्दर तरीक़े से मुझे एक माँ की भूमिका के बारे में समझाया : प्रेम करना, बच्चे का पालन-पोषण करना, उसकी सुरक्षा का ध्यान रखना, यह सुनिश्चित करना कि बच्चा ठीक है, और बच्चे के स्वास्थ्य व कल्याण की ओर ध्यान देना। गुरुमाई जी ने मुझसे कहा कि यदि मैं हमेशा उसे ख़ुश रखने के लिए उसके "मनोरंजन का साधन" बनूँगी तो उसे भविष्य में इसका मूल्य चुकाना पड़ेगा। यह बात उसे यह सीखने से रोकती रहेगी कि जब उसकी भावनाएँ सुखद न हों तब वह स्वयं के साथ किस प्रकार बना रहे। तब वह शायद अपने अकेलेपन या दुःख की भावनाओं से बचने के लिए अपने जीवन में अनुचित लोगों को "मनोरंजन के साधन" के रूप में ला सकता है। अब जब वह एक बच्चा है, तब यदि मैं उसे अपनी भावनाओं के साथ बने रहने से दूर हटाती रहूँगी तो जब वह बड़ा होगा, तो हो सकता है कि अपनी सच्ची भावनाओं से स्वयं को दूर करना चाहे और चीज़ों को पूरी तरह से सोच-समझ लेने की सामर्थ्य खो बैठे। हो सकता है अपने निर्णय ख़ुद लेने के बजाए वह दूसरों पर निर्भर होना चाहे।

मैंने अपने पूरे दिल से गुरुमाई जी को धन्यवाद दिया और उनके मार्गदर्शन को तुरन्त ही लागू करना शुरू कर दिया। अपने बेटे को चुप कराने और मेरे मनचाहे मूड़ में लाने के बजाए, मैंने उसे सुनने व समझने की ओर अपना ध्यान देना शुरू कर दिया कि वह वास्तव में क्या बताने की कोशिश कर रहा है। ऐसा करने से मेरे अन्दर एक खुलापन आने लगा और मैं किसी भी पल में उसकी ज़रूरतों को समझने लगी कि उस क्षण में उसे क्या चाहिए, जैसे कि वह भूखा है, या उसे ठण्ड लग रही है, वह थका है या ऊबने लगा है या उसके कपड़े बदलने हैं। गुरुमाई जी ने जो देखा था, मुझे वह अब समझ में आने लगा—कि मेरा बेटा वास्तव में मनोरंजन नहीं चाहता था। वह चाहता था कि उसके लिए मैं उसकी माँ बनूँ।

जैसे-जैसे मेरी परवरिश अधिक आसान व प्रभावकारी होती गई, मेरा बेटा अधिकाधिक सहज और आत्म-निर्भर होने लगा। मेरे पति मुझसे कहते, "तुम एक बहुत अच्छी माँ हो—यह सब इतनी अच्छी तरह से करना तुम्हें कैसे आता है?" मैं कहती, "गुरुमाई जी जो बताती हैं कि एक माँ कैसे बनना चाहिए, मैं वह सुनती हूँ।"

श्रीगुरुमाई से यह मार्गदर्शन मिले अब लगभग अठारह वर्ष बीत चुके हैं, और मैं इस बात को प्रमाणित कर सकती हूँ : मेरे बेटे को खुद के साथ रहना बहुत पसन्द है। वह स्वयं ही अपने लिए एक दिशा तय कर लेता है और वह उस दिशा में आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ता है। अपनी संगति चुनने में वह निश्चित ही विवेकशील है। मेरे बेटे का जीवन जिस तरह से विकसित हो रहा है वह एक माँ की हार्दिक इच्छा की पूर्ति है—यह जानना कि उसके बच्चे अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं और उनमें यह दृढ़ समझ है कि वे कौन हैं।

श्रीगुरुमाई का प्रेम व मार्गदर्शन मेरी परवरिश का आधार है। और मैं अपने हृदयचक्षु से देख सकती हूँ कि मेरे बच्चे इस मार्गदर्शन को उनके बच्चों को विरासत में देंगे। और यह परम्परा चलती जाएगी।

धन्यवाद, गुरुमाई जी।

© २०१७ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।